पूज्य बाबूजी जुगल किशोर जी युगल, कोटा
आदरणीय चेतनभाई के साथ तत्त्व-चर्चा
तारीख ०२-०७-२०१३, निज निवास स्थान – कोटा

पूज्य बाबूजी: पाँच भाई हैं। एक वक़ील है, एक डॉक्टर है, एक व्यवसायी है, एक जो है dairy का काम संभालता है और एक जो है वो घर की और व्यवस्थाएँ देखता है। ये पाँच हैं। अब इन पाँच में से अपन एक को अलग कर दें तो घर का काम चल जायेगा क्या?

आ. चेतनभाई: नहीं चलेगा। नहीं चलेगा।

पूज्य बाबूजी: और हैं सबके काम न्यारे-न्यारे।

आ. चेतनभाई: हाँ! अलग-अलग होते हुए भी एकरूप हैं वो।

पूज्य बाबूजी: तो एक में सबका भाव है क्योंकि एक का अभाव करते ही सबका अभाव हो जाता है। सब संकट में पड़ जाते हैं। इस तरह एक गुण में अनंत गुणों का रुप (है) - ये बात सिद्ध हो जाती है। क्योंकि न्यारे-न्यारे होने पर भी इनको अपन अत्यंत न्यारा.... माने इनमें कोई समझौता ही नहीं है - ऐसा नहीं है। सब गुणों में समझौता है और सबका काम न्यारा-न्यारा है। एक जरा सा फर्क.... (ज़रा सा) काम में फर्क पड़ते ही दूसरी शक्ति पैदा हो जाती है, दूसरा गुण पैदा हो जाता है। इस तरह अनंत बनते हैं।

आ. चेतनभाई: बराबर! बराबर! बराबर!

वो समझ में नहीं आया आप (जो) बोले वो कि एक दूसरा काम ..... वो क्या बोले आप अभी? अभी आपने (जो) बोला वो कुछ समझ में नहीं आया। आप (जो) बोले वो।

पूज्य बाबूजी: न्यारे-न्यारे होते हुए भी अगर (उन्हें) अत्यंत न्यारा मानें तो द्रव्य से अलग हो गए और सब न्यारे-न्यारे (हो गए), बिखर गए। इसलिए इनमें पारस्परिक compromise है एक, समझौता है - ये है बात। और काम न्यारा-न्यारा (है सबका)।

आ. चेतनभाई: हाँ! लक्षण अलग-अलग हैं। लक्षण सबके अलग-अलग हैं, काम न्यारा-न्यारा है मगर साथ में ही रहते हैं।

पूज्य बाबूजी: और एक ही द्रव्य के हैं सब। तो वो पाँचों एक ही पिता के हैं।

ये मेरी बात आपको जमती हो तो ठीक नहीं तो आप समझाओ मुझे..

आ. चेतनभाई: नहीं नहीं! नहीं! बाबूजी ऐसा नहीं है। ऐसा नहीं है। एकदम जमती है ऐसी कोई बात नहीं है। आप बोलते हो वो समझ में आता है बराबर। ऐसा नहीं है कुछ। ऐसा नहीं है।

इसमें और एक प्रश्न था कि एक गुण में अनंत गुण के रूप की बात तो आपकी समझ में आयी मेरे को कि एक ऑफ़िस के दृष्टांत से, एक घर के दृष्टांत से कि सभी गुण न्यारे-न्यारे होते हुए भी एक साथ रहते हैं। सबका कार्य अलग-अलग होते हुए भी....

पूज्य बाबूजी: सहभाव है उसमें, सहभाव।

आ. चेतनभाई: सहभाविक गुण हैं, बराबर है। अतद्भाविक अन्यत्व होने पर भी वो सब साथ में हैं। ऐसा वो तो समझ में आ गया।

पूज्य बाबूजी: ऐसी भिन्नता नहीं (है) कि दो द्रव्य हैं।

आ. चेतनभाई: हाँ! ऐसी भिन्नता नहीं है, ऐसी भिन्नता नहीं है।

पूज्य बाबूजी: वरना ऐसा हो जायेगा।

आ. चेतनभाई: हाँ! बराबर! बराबर! सही बात है। सही बात है।

पूज्य बाबूजी: वो अनंत द्रव्य हो जायेंगे या अभाव हो जायेगा, द्रव्य से न्यारा होने पर।

आ. चेतनभाई: दूसरा एक प्रश्न था बाबूजी कि भी सम्यग्दर्शन के काल में जब भी चौथा गुणस्थान आता है तो श्रद्धा तो १००% उस समय में, प्रतीति तो हो जाती है पूरी। तो श्रद्धा गुण की तो प्रतीति हो गई पूरी, श्रद्धा गुण तो सम्यक् हो गया। बाकी के जो गुण हैं वो आंशिक सम्यक् होते हैं। आंशिक सम्यक् होते हैं।

पूज्य बाबूजी: मुख्य गुण। श्रद्धा तो पूरी हो जाती है और दूसरे गुण आंशिक (सम्यक्) होते हैं। ज्ञान भी (सम्यक्) हो गया। ज्ञान भी पूरा सम्यक् हो गया।

आ. चेतनभाई: अच्छा! ज्ञान पूरा हो गया सम्यक्? चौथे गुणस्थान में?

पूज्य बाबूजी: हाँ! पूरा सम्यक् हो गया, चौथे गुणस्थान में। पूरा सम्यक् हो गया क्योंकि उसने आत्मा का संपूर्ण स्वरूप (को) जान लिया और अनुभव कर लिया। अब उसमें क्या कमी हो सकती है? बस! (कि) वो अल्प है। पर अल्प होने पर भी उसमें ताक़त इतनी है। ताकत इतनी है। जगत को ना जाने लेकिन अपने को जानने की ताक़त नहीं हो तो फिर वो व्यक्त ही क्या हुआ? वो वस्तु ही क्या हुई? अपन क्या हुए अगर अपन अपने को नहीं जाने (तो)?

Court (अदालत) में कोई पूछे तुम्हारा नाम? कि साहब! होगा। मुझे मालूम नहीं (है)। अच्छा! तुम्हारे पिता का नाम? वो भी मालूम नहीं है। तो तुम्हारे यहाँ क्या काम (है)? वो भी मुझे मालूम नहीं। और ये जो पास में खड़ा है ये कौन है? तो कहे (कि) ये हमारा पड़ोसी है। और ये क्या है? कि ये ये धंधा करता है और ये ये काम करता है। तो कहते हैं तुम इसको जानते हो और अपने को नहीं जानते तो (फिर) तुम किसी को (भी) नहीं जानते। गलत है सब तुम्हारा।

आ. चेतनभाई: बराबर! बराबर! तो ज्ञान भी चौथे गुणस्थान में पूरा सम्यक् हो गया?

पूज्य बाबूजी: पूरा हो गया। सम्यक् हो गया। हाँ! पूरा क्षयोपशम समाप्त होकर और पूर्ण नहीं हुआ। ना हो, उससे मतलब नहीं (है) कुछ। बाकी सही बात तो यह है कि ये जितना ज्ञान हुआ शिवभूती मुनि जैसा, तो उसने जो शुद्धात्मा का अनुभव कर लिया (जो कि) अनादि से नहीं था। और शुद्धात्मा का अनुभव कर लिया तो बाकी जो ज्ञान है उसके लिए तो मैं कहा करता हूँ कि उसको तो पेटी में बंद करके रख दो क्योंकि उसके विषय तो परद्रव्य हैं।

आ. चेतनभाई: हाँ! जी! हाँ जी! वो इन्द्रियज्ञान हो गया न, वो इन्द्रियज्ञान हो गया।

पूज्य बाबूजी: हाँ! इन्द्रियज्ञान है।

आ. चेतनभाई: परद्रव्य हो गया है।

पूज्य बाबूजी: परद्रव्य है।

देह और आत्मा का पृथक अनुभव कर लो।

और बाकी ज्ञान पेटी में बंदकर धर दो।

यही मोक्षमार्ग, यही मोक्ष, यही रत्नत्रय।

जीने की एक कला जल्दी से सीख़ लो।

आ. चेतनभाई: बराबर! ठीक! बराबर! बराबर! अच्छी बात है, बराबर।

पूज्य बाबूजी: उतना ज्ञान ही है असली। गुरुदेव कहा करते थे कि वर्तमान में शास्त्र का ज्ञान कितना? मैंने सुना है वहीं कि वर्तमान में शास्त्र का ज्ञान कितना? कि सम्यग्दृष्टि के ज्ञान जितना। बाक़ी लुप्त है। अज्ञानी तो कुछ जानता ही नहीं है।

आ. चेतनभाई: उसको तो कुछ है ही नहीं, उसके पास। बराबर है।

पूज्य बाबूजी: कुछ है ही नहीं।

आ. चेतनभाई: तो उसमें बाबूजी! वो जो ८०वीं गाथा में वो उपयोग से जो मिलाया (मिलान किया)।प्रवचनसार की ८०वीं गाथा में (कि) जो अरिहंत के द्रव्य-गुण-पर्याय से अपने द्रव्य-गुण-पर्याय से मिलाया तो उसमें अपनी पर्याय में अपने को क्या लेना?

पूज्य बाबूजी: अपनी पर्याय भी शुद्ध है अरिहंत की तरह।

आ. चेतनभाई: अरिहंत की तरह?

पूज्य बाबूजी: हाँ! आपके यहाँ क्या चलता है इसका (विश्लेषण)?

आ. चेतनभाई: नहीं! वो उपयोग से.... ज्ञान के वो प्रगट उपयोग से हम समझते हैं, वो लालचंदभाई जो बताते थे।

पूज्य बाबूजी: क्या बताते थे?

आ. चेतनभाई: कि अरिहंत के जो द्रव्य-गुण-पर्याय हैं वो तो उनकी पर्याय भी परिपूर्ण शुद्ध हो गई है और अपनी पर्याय में तो अभी शुद्धता पूरी प्रगट नहीं हुई है। मगर अरिहंत का भी उपयोग प्रगट होता है पर्याय में और अपना भी ज्ञान में उपयोग प्रगट होता है, ज्ञान का। तो वो ज्ञान के उपयोग से अपन मिलान करें अरिहंत के द्रव्य-गुण-पर्याय को, तो मिलता है - ऐसी बात है। तो इसमें आपका view (राय), आपकी thinking क्या है?

पूज्य बाबूजी: वो तो बहुत बढ़िया गाथा है साहब। बहुत गंभीर गाथा है। उसमें कम-अधिक ज्ञान की बात करना ही नहीं। क्योंकि अगर हम ऐसा करते हैं तो आचार्यों को challenge करते (चुनौती देते) हैं। उसमें ये शब्द है (कि) निश्चय से दोनों समान हैं। और अधिकांश विद्वान जो करते हैं वो पर्याय में असमान बताते हैं। तो वो आचार्य को challenge करते हैं। आचार्य को challenge करते हैं।

इसमें क्या है कि अरहंत का जो द्रव्य-गुण-पर्याय है (वो) पूर्ण (तो) है ही सही। पूर्ण है। तो जो अरिहंत को जानता है वो अपने को जानता है। ऐसा आया न उसमें? वो अपने को जानता है क्योंकि निश्चय से दोनों समान हैं। निश्चय से दोनों समान हैं।

आ. चेतनभाई: हाँ! निश्चय से, वास्तव में।

पूज्य बाबूजी: तो उसमें क्या है? क्या किया इसने प्रारम्भ में कि - ये ज्ञान में रागादि को मिलाता था। परद्रव्य को मिलाता था तो ज्ञान में मिश्रण करता था। अब इसने क्या किया? कि अरिहंत के स्वरूप को जाना तो उसने (ये) जाना कि अरिहंत का जो ज्ञान है वहाँ राग का अभाव है। और मेरा जो ज्ञान है वहाँ राग का सद्भाव तो है पर मैं राग का मिश्रण मानता रहा। लेकिन उसमें राग नहीं है मेरे ज्ञान में भी। मेरी पर्याय (जो है) प्रति समय की, उसमें राग नहीं है बिल्कुल। तो भगवान अरिहंत भी राग रहित होने से अपनी शुद्धात्मा को जानते हैं और मैं भी राग को न्यारा करके.... न्यारा करके माने न्यारा ही था।

आ. चेतनभाई: न्यारा जान लिया।

पूज्य बाबूजी: ये तो (मिला-जुला) मानता था ख़ाली। तो मेरा ज्ञान भी निर्मल हो गया।

आ. चेतनभाई: (अब) समझ गया।

पूज्य बाबूजी: भले ही थोड़ा हो तो क्या हो? लेकिन मेरा ज्ञान भी निर्मल हो गया। इसलिए इस निर्मल ज्ञान से मैं भी अरिहंत के समान अपनी शुद्धात्मा को जानता हूँ। इस तरह निश्चय से दोनों समान हुए कि नहीं? भगवान का इतना बड़ा केवलज्ञान, अरिहंत का। (और) उससे वो केवल शुद्धात्मा जानते हैं; और (बाकी सब उनके लिए) अप्रयोजनभूत है। और मैं भी शुद्धात्मा को.... जितना भगवान जानते हैं उतना ही मैं जानता हूँ।

आ. चेतनभाई: बराबर है! बराबर है! ठीक है। बराबर है! माने कि राग को पृथक् उसने मान लिया तो समान ही हो गया।

पूज्य बाबूजी: समान हो गया।

आ. चेतनभाई: बराबर है। क्योंकि राग की एकमेकता तो ज्ञान से कभी होती ही नहीं (है)। वो तो पृथक ही रहता है। अनादि से पृथक है उसने माना ही है ख़ाली।

पूज्य बाबूजी: ज्ञान में और सब का मिश्रण माना (मगर) मिश्रण हुआ नहीं। नहीं हुआ पर इसने माना तो यही विकार है। यही शुद्धात्मा तक नहीं पहुँचने देता (है)।

आ. चेतनभाई: सही बात है। बराबर!

पूज्य बाबूजी: इतना बढ़िया है (कि) निश्चय से दोनों समान (हैं)।

आ. चेतनभाई: हाँ! उसमें लिखा है आचार्य भगवान का... आचार्य भगवान ने लिखा है ऐसा (कि) निश्चय से.... अमृतचंद्र आचार्य ने लिखा।

पूज्य बाबूजी: और ये जो इस तरह का इसको divert (फेर-बदल) करते हैं इधर-उधर, तो वो बहुत अनर्थ करते हैं। आचार्य को challenge करते हैं क्योंकि वो शब्द आचार्य के हैं। और (उनको)

तोड़-मरोड़ करके उसको (कहते हैं) कि वो भी पर्याय है ज्ञान की। बस! इस तरह से उसको समाप्त कर देते हैं।

अब दूसरी बात कि जैसे अनंत गुणों को एक कहा, एक, एक द्रव्य। तो उस तरह जो सापेक्ष धर्म हैं आस्ति-नास्ति वगैरह उनका क्या हुआ?

आ. चेतनभाई: माने कि नित्य-अनित्य, वो सब?

पूज्य बाबूजी: हाँ वो सारे। वो भी अनंत हैं।

आ. चेतनभाई: हाँ जी! हाँ जी! हाँ जी! बराबर! सापेक्ष धर्म तो दृष्टि के विषय में नहीं आते हैं न क्योंकि वो गुण नहीं हैं। उसकी पर्याय भी नहीं होती है, धर्म की। तो वो तो दृष्टि के विषय में नहीं आते हैं। वो... ज्ञान ज़रूर होता है उसका। आप क्या बताना चाहते हैं उसके बारे में?

पूज्य बाबूजी: वही पूछना चाहता हूँ मैं कि गुणों की तरह उनको शामिल करते हैं (दृष्टि के विषय में) या अलग रखते हैं? क्या करते हैं? आपके यहाँ कैसी होती है इसकी चर्चा?

आ. चेतनभाई: नहीं! ये प्रश्न तो बहुत चला था पहले भी। वो.... बहुत चर्चा इसकी चली। बाद में एक बार गुरुदेव ने रात्रि-चर्चा में ये बात बताई थी कि ये धर्म हैं वो दृष्टि के विषय में नहीं आते हैं।

पूज्य बाबूजी: हाँ! ये सही कह रहे हैं आप।

आ. चेतनभाई: क्योंकि वो धर्म हैं उसकी पहले तो पर्याय नहीं होती है। और वो अनित्य धर्म है (तो) वो अनित्य धर्म से ये सिद्ध होता है कि वो त्रिकाली ध्रुव में (तो है) ही नहीं वो। उसको तो न्यारा रखकर ही दृष्टि का विषय सिद्ध होता है।

पूज्य बाबूजी: वो तो सापेक्ष कहलाते हैं या परस्पर विरुद्ध कहलाते हैं। विरुद्ध कहलाते हैं। तो परस्पर विरुद्ध को शामिल करेगा तो कहाँ जायेगा उपयोग? किसकी तरफ़ जायेगा? मैं अस्तिरुप भी हूँ और नास्तिरूप भी हूँ।

आ. चेतनभाई: हाँ! वो तो जोड़ा है। जोड़ा तो टूटता ही नहीं उसका।

पूज्य बाबूजी: जोड़ा है और वो तो साथ ही रहता है।

आ. चेतनभाई: साथ ही रहता है। बराबर!

पूज्य बाबूजी: और ये कहते हैं लोग कि हम तो द्रव्य-द्रव्य के (धर्म) ले लेंगे।

आ. चेतनभाई: ऐसा नहीं होता है न! वो छूटता ही नहीं है वो तो।

पूज्य बाबूजी: वो तो साथ ही रहते हैं। तो तू कैसे ले लेगा? और उसमें तो वो तो कई धर्मों का अभाव हो जाता है सिद्ध दशा में (ऐसा) गुरूदेव ने लिखा है। और वो (तो) स्वयं ही विरुद्ध हैं।

आ. चेतनभाई: हाँ! विरुद्ध हैं, विरुद्ध हैं। बराबर!

पूज्य बाबूजी: तो वो उसमें बिल्कुल शामिल नहीं होते। सिर्फ द्रव्य अपना अनादि-अनंत और सारे अनंत गुण - ये दृष्टि का विषय है पूरा। और पूर्ण है ये, पर्याय के बिना (भी)। पर्याय के बिना।

आ. चेतनभाई: हाँ! वो पूरा अंशी है। पर्याय के बिना पूरा अंशी है।

पूज्य बाबूजी: पदार्थ की ओर से देखें तो अंश लगता है। ये प्रारम्भ की बात है, समझने की।

लेकिन ये जैनदर्शन की पराकाष्ठा है, ये पराकाष्ठा है।

आ. चेतनभाई: एकदम बराबर! बराबर!

पूज्य बाबूजी: तो वो एक द्रव्य और अनंत गुण इन सबको मिलाकर मैं एक (हूँ), उसमें भी विकल्प नहीं।

आ. चेतनभाई: हाँ! भेद विकल्प नहीं (है)।

पूज्य बाबूजी: माने गुण अनंत न्यारे-न्यारे होने पर भी विकल्प रंचमात्र नहीं। रंचमात्र नहीं।

ऐसा कैसे है? Example (उदाहरण) से अपन बात करते हैं कि जैसे ये मकान है। इसमें बीस कमरे हैं। अब कोई मेरे से पूछे कि आपके कितने मकान हैं? कि एक मकान है। अच्छा! तो कहा कि दिखाओगे क्या? कि हाँ, दिखायेंगे। तो वो देखने आया। तो उसने बीस कमरे देखे, तो कहे कि आप इतना झूठ बोलते हो। ये तो बीस मकान हैं, ये तो बीस मकान हैं। ये बीस हैं लेकिन एक के साथ अत्यंत अभेद हैं। एक को भी अलग नहीं किया जा सकता। इसलिए अनंत गुणात्मक एक है, अभेद-अखंड। अखंड कहते हैं उसको और पूर्ण। अब जैसे कभी ऐसा आता है आपके यहाँ कि पर्याय के बिना पूर्ण कैसे हैं? तो इसका क्या जवाब है?

आ. चेतनभाई: नहीं। हमारे यहाँ तो यही चलता है कि पर्याय उत्पाद-व्ययवाली है और ध्रुव है वो अपने से ही परिपूर्ण है। उसमें पर्याय की ख़रेखर (वास्तव में) जरूरत ही नहीं है क्योंकि अंशी तो पूरा है, त्रिकाली द्रव्य अनंत गुणात्मक एक अखंड-ध्रुव। उत्पाद-व्यय तो है ही नहीं उसमें। ऐसा ही चलता है अपने यहाँ तो बाबूजी, राजकोट में तो।

पूज्य बाबूजी: अब मैं निवेदन करूँ थोड़ा।

आ. चेतनभाई: हाँ जी! बोलिए, बोलिए।

पूज्य बाबूजी: अपने मुमुक्षुओं में ही ये बात बहुत चलती है कि पर्याय के बिना पूर्ण कैसे हो सकता है? तो अपने को युक्ति से सिद्ध करना चाहिए। युक्ति से सिद्ध करना चाहिए कि पहली बात तो ये (है) कि अनित्य पर्याय को अगर शामिल करते हैं तो द्रव्य नित्य और अनित्य दिखाई देगा और तब दो विकल्प हो जायेंगे। निर्विकल्पदशा नहीं होगी।

और दूसरी बात कि जैसे द्रव्य अनादि-अनंत और गुण अनादि-अनंत एकदम शुद्ध अविनश्वर (और) ध्रुव, अब ये (तो) सदा से है। तो अनादि से जो आत्मा है (उसको) ये मोह-राग-द्वेष तो गालियाँ देते हैं। वो तो तिरस्कार करते हैं। इसलिए जितना द्रव्य है अनंत गुणात्मक, ये पूरा आत्मा है या अधूरा (आत्मा है) मोह-राग-द्वेष के बिना?

आ. चेतनभाई: पूरा आत्मा है वो, अनंत गुणात्मक।

पूज्य बाबूजी: अधूरा जगत में कोई पदार्थ हो तो आप बताओ, कोई (भी) जड़ (या) चेतन।

आ. चेतनभाई: नहीं! नहीं! कोई अधूरा है ही नहीं। सब परिपूर्ण अपने-अपने से हैं।

पूज्य बाबूजी: तो अनादि से जो स्वयं सत्ता स्वरूप है ऐसा जो चैतन्य स्वरूप आत्मा है, तो ये पूरा है या नहीं?

आ. चेतनभाई: पूरा, पूरा है।

पूज्य बाबूजी: पूरा है - एक बात तो ये हुई। अब दूसरी बात कि अनादि से ये पूरा है और अनादि से ही इसके साथ मोह-राग-द्वेष हैं। अब उस पर्याय को लोग मिलाना चाहते हैं। तो अपन पूछते हैं कि अनादि से ये जो अनंत गुणात्मक द्रव्य है और इधर मोह-राग-द्वेषवाली पर्याय है। तो उसने आत्मा को अशुद्ध मोही-रागी-द्वेषी माना (है), जो आत्मा था अनादि से (उसको)। माना न? माना। क्या हुआ आत्मा का?

आ. चेतनभाई: कुछ नहीं बिगड़ा उसका। वो तो ऐसा का ऐसा ही रहा। उसको कुछ नहीं होता है। वो तो माननेवाले की तकलीफ है।

पूज्य बाबूजी: कुछ नहीं हुआ। यानि उतना का उतना ही रहा न पूरा?

और दूसरी बात कि सम्यग्दर्शन हुआ.... और वो सम्यग्दर्शन आत्मा को हार पहनाता हुआ आया, सत्कार करता हुआ (आया)। तो क्या हुआ उसका आत्मा का?

आ. चेतनभाई: कुछ नहीं! वो तो ऐसा का ऐसा ही है।

पूज्य बाबूजी: सम्यग्दर्शन से कुछ अधिकता आयी?

आ. चेतनभाई: नहीं! नहीं! अधिकता होती ही नहीं उसमें। वो तो पहले से ही अधिक है, परिपूर्ण।

पूज्य बाबूजी: और मोह-राग-द्वेष ने इसको अधूरा माना तो अधूरा थोड़ा-बहुत कम हुआ क्या?

आ. चेतनभाई: नहीं, नहीं। कुछ नहीं। बराबर! कम-बढ़ से दूर है वो। कमी होती (ही) नहीं उसमें।

पूज्य बाबूजी: इसलिए वो पर्याय से निरपेक्ष-पूर्ण है, ये युक्ति है ये। पर्याय से अगर थोड़ा भी सम्बन्ध होता इसका..... शुरू में तो संबंध माना अपन ने (परंतु वो) जानने के लिए (है)। लेकिन अगर इसका थोड़ा भी संबंध होता तो फिर मिथ्यात्व दशा में (कुछ) कम हो जाता (आत्मा में)। तो द्रव्य का ही अभाव हो जाता। और सम्यग्दर्शन (होता तो आत्मा) में (कुछ) अधिक हो जाता। लेकिन (ऐसा तो) कुछ नहीं हुआ, मिथ्यात्व में (और) सम्यकत्व में दोनों दशाओं में।

आ. चेतनभाई: वो तो पूरा का पूरा है।

पूज्य बाबूजी: पूरा का पूरा रहा। इसलिए वह पर्याय से निरपेक्ष होने के कारण, पर्याय की कोई अपेक्षा उसको नहीं है। तो पर्याय की अपेक्षा नहीं होने के कारण, निरपेक्ष होने के कारण (वो) पूर्ण है। क्योंकि जो निरपेक्ष होता है वो पूर्ण होता है।

ये जो धर्मों की चर्चा है न (वो) आपने जैसी बतायी (वैसी) है। तो वो मेरे को लगता था शुरू में कि इन धर्मों को शामिल नहीं किया जा सकता क्योंकि दृष्टि का विषय अपन एक बार निश्चित कर लें.... क्योंकि ये तो बाधक होते हैं। लेकिन मुझे गुरुदेव का प्रमाण नहीं मिल रहा था। प्रमाण नहीं मिल रहा था। नय-प्रज्ञापन में भी नहीं मिला। तो मोरबी से इन्दुभाई आये थे यहाँ। तो उनके साथ जब चर्चा हुई तो ये विषय भी आया। तो मैंने कहा (कि) मुझे तो इनको शामिल करना लगता नहीं (परंतु) गुरुदेव का

प्रमाण नहीं मिला। शास्त्र में भी नहीं मिलता है। तो (वो बोले) अरे! कि बाबूजी मैं बताता हूँ आपको। वहाँ बम्बई वाले मायाभाई ने उठाया था ये प्रश्न रात्रि-चर्चा में। तब गुरुदेव ने स्वयं कहा था कि ये सापेक्ष धर्म अथवा परस्पर विरुद्ध धर्म वो दृष्टि के विषय में शामिल नहीं होते। अरे! मैंने कहा बढ़िया (ये तो) हो गया।

आ. चेतनभाई: उसका प्रमाण भी मिल गया है, बाबूजी। और प्रमाण भी छपा हुआ मिल गया है।

पूज्य बाबूजी: मिल गया है?

आ. चेतनभाई: मैं आपको भेजूँगा उसका प्रवचन नंबर। इनको दे दूँगा (मैं)। वो अपने पास है प्रमाण, वो मैं आपको प्रमाण भी दे दूँगा। वो गुरुदेव के मुँह से बोली हुई बात है। अपने पास प्रमाण है उसका।

पूज्य बाबूजी: चर्चा का?

आ. चेतनभाई: चर्चा का नहीं है मगर वो १९ वीं बार के समयसार के प्रवचन में आयी है ये बात। वो मैं आपको प्रवचन नंबर भेजूँगा, मेरे पास आधार है वो। चाहिए नहीं, चाहिए नहीं (है) आपको।

पूज्य बाबूजी: आप तो इतना ही रखो। उसका कारण ये है कि मेरी दृष्टि बहुत मंद हो गई।

आ. चेतनभाई: कोई बात नहीं!

एक प्रश्न और है कि अभी अपनी जो चर्चा चली न कि सम्यग्दर्शन के काल में श्रद्धा तो परिपूर्ण हो गई और ज्ञान भी हो गया। ज्ञान अल्प है पर ज्ञान हो (तो) गया।

पूज्य बाबूजी: नहीं! वो ध्यान की बात रह गई अभी।

आ. चेतनभाई: हाँ! ध्यान की, ध्यान की। हाँ जी! हाँ जी! बताईए।

पूज्य बाबूजी: क्योंकि पहले ही क्षण में हो गई अनुभूति तो। और सम्यग्दर्शन हो गया अनुभूति हो गई। तो फिर ध्यान आगे चलेगा, जब अंतर्मुहूर्त होगा तब होगा।

मैंने काफी विचार किया इस बात पर, तो ऐसा सिद्ध होता है कि अंतर्मुहूर्त रहती है वो अनुभूति और अंतर्मुहूर्त ही वो ध्यान होता है। तो क्या हुआ? कि अंतर्मुहूर्त रही न वो। तो जो पहला क्षण है जिसमें अनुभूति हुई, तो वो पहला क्षण भी (उस) अंतर्मुहूर्त में शामिल है।

आ. चेतनभाई: अच्छा हाँ! बराबर है। बराबर है। अंतर्मुहूर्त में पहला क्षण शामिल हो गया।

पूज्य बाबूजी: उसमें ही तो शामिल होगा।

आ. चेतनभाई: हाँ! उसमें ही तो है न वो। बराबर है, बराबर है।

पूज्य बाबूजी: इसीलिए अंतर्मुहूर्त सम्यग्दर्शन के लिए (है)।

आ. चेतनभाई: सही बात है। सही बात है।

पूज्य बाबूजी: नियम है वो।

आ. चेतनभाई: नियम है, बराबर है।

पूज्य बाबूजी: **आनंद ब्रह्मणो रुपं निजदेहे व्यवस्थितम्।**

ध्यानहीना न पश्यंति जात्यंधा इव भास्करम् ॥ (परमानन्दस्तोत्र)

तो सब प्रमाण है न ये?

आ. चेतनभाई: एकदम प्रमाण है।

पूज्य बाबूजी: और वो १९४ गाथा भी प्रमाण है कि वो मोह का क्षय वहाँ हुआ, इतना ध्यान हुआ जब। आनंदब्रह्म कहा शुद्धात्मा को, आनंदमय!

आ. चेतनभाई: हाँ! **आनंद ब्रह्मणो रुपं निजदेहे व्यवस्थितम्।**

पूज्य बाबूजी: ब्रह्मानन्द है ये। **निजदेहे व्यवस्थितम्** व्यवस्थित पड़ा है और कुछ कीचड़-कब्जा नहीं (है)। और हैं वहाँ, परतत्त्व हैं, परद्रव्य हैं पर ये अलग-थलग पड़ा है। हर चीज जिसमें भेद होता है भाव-भेद वो सब अलग ही होते हैं। सब अलग ही होते हैं।

आ. चेतनभाई: बाबूजी! वो चौथे गुणस्थान में श्रद्धा सम्यक् परिपूर्ण हो गई, ज्ञान भी हो गया। चारित्र बाकी रह गया, यथाख्यात् नहीं हुआ अभी। यानि कि स्वरूपाचरण (चारित्र) तो हो गया चौथे गुणस्थान में। बाकी का चारित्र बाकी रह गया। तो इसमें अपने को जो पर्याय में अधूरास ये रह जाती है, तो उसमें एक बात तो ये आती है कि ये षट्कारक का ही परिणमन है और चारित्र गुण की योग्यता ही ऐसी है कि वो क्रम-क्रम से शुद्ध होती है। एक बात तो ये आती है। और उसमें कोई दूसरा न्याय है कि ये ऐसा क्यों होता है क्योंकि उसने श्रद्धा-ज्ञान चारित्र सब गुणों की पर्याय ने पूरे आत्मा में अपना बल समर्पित किया है। फिर भी इसकी (चारित्र गुण की) अधूरास रह गया इसकी (श्रद्धा की) परिपूर्णता हो गई (है)। तो उसमें षट्कारक का परिणमन है वो तो एकदम सही बात है (कि) उसकी योग्यता ही ऐसी है। मगर इसमें और कोई न्याय आपको यदि है तो बताइए।

पूज्य बाबूजी: ये तो सब जानने की बातें थी जो उसने अनुभव के पहले जान लीं। अब जब आत्मा का स्वरूप परिपूर्ण अनंत शक्तिवाला, अनंत वैभववाला और सारे जगत से श्रेष्ठ ऐसा उसने जान लिया तो वो पर्याय की क्यों बात करेगा? उसने तो पर्याय को पहले ही बहिष्कृत कर दिया।

आ. चेतनभाई: सही बात है! सही बात है।

पूज्य बाबूजी: उसकी बात क्यों करेगा वो?

आ. चेतनभाई: ठीक बात है। बराबर!

पूज्य बाबूजी: उसकी चिंता कहाँ है? वो तो पूर्ण मान रहा है प्रतिसमय। अधूरास की बात कहाँ है? और वो जानता है (कि) ये तो अपने समय में पूरी हो जायेंगी। वो तो ये मानता है कि मेरा मोक्ष होता ही नहीं और मुझे मोक्ष जाना नहीं।

आ. चेतनभाई: मैं मोक्ष स्वरूपी हूँ ऐसा मानता है।

पूज्य बाबूजी: हाँ! मान लिया न पहले? मुक्त ही हूँ तो मोक्ष होता ही नहीं मेरा। अगर मेरा मोक्ष होता माने सम्यग्दर्शन के बिना, तो वो तो मिथ्यादृष्टि है कि मेरा मोक्ष होता है। क्योंकि वो (ज्ञानी) तो मोक्ष को transfer (स्थानांतरण) मानता है कि जो काम मैं यहाँ करता हूँ वही काम वहाँ करूँगा।

जैसे एक ईमानदार व्यक्ति होता है न! तो उसका transfer कर दिया ऐसी जगह में, (किसी) और जगह में। तो लोग कहने लगे - भाई! तुम्हारा तो अच्छी जगह नहीं हुआ। तो वो बोला कि जो मुझे तो जो यहाँ करना है वही वहाँ करना है। तो मोक्ष में मैं क्या करूँगा नया काम?

आ. चेतनभाई: क्षेत्र से कोई फरक नहीं पड़ता है।

पूज्य बाबूजी: रत्ती भर फ़र्क नहीं पड़ता है। मोक्ष होता है लेकिन मेरा नहीं होता।

आ. चेतनभाई: हाँ! मैं तो मोक्ष स्वरूपी हूँ - ऐसा लेना, बराबर है।

पूज्य बाबूजी: मुक्त हूँ मैं तो।

आ. चेतनभाई: हाँ! सदा ही मुक्त हूँ।

पूज्य बाबूजी: मुक्त हूँ मैं तो। होता है ये जान लिया बस, लेकिन मेरा नहीं होता।

आ. चेतनभाई: हाँ! एकदम-एकदम बराबर, ठीक है।

पूज्य बाबूजी: अब अगर वो इससे थोड़ा भी कम-अधिक मानता हो तो इसका अर्थ ये हुआ कि उसने पर्याय को शामिल कर लिया और वो वापस मिथ्यादृष्टि हो गया।

आ. चेतनभाई: हाँ जी! हाँ जी! बराबर! एकदम बराबर।